युग सेतु

वर्ष 6 अंक 65 जनवरी 2017

वेबसाइट : www.yugsetu.com

संपादक

ओम प्रकाश शर्मा

कार्यालय

जी-21, प्रथम तल, लक्ष्मी नगर

दिल्ली-110092

दूरभाष-011-22040692

संपर्क कार्यालय

873, सेक्टर-21सी, हरियाणा-121001

दूरभाष-9013379808, 9650914297

ई.मेल : yugsetu@gmail.com

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक ओम प्रकाश शर्मा द्वारा, जी 21 लक्ष्मी नगर, दिल्ली से प्रकाशित एवं ग्राफिक प्रिंट, 383 एफ.आई.ई.पटपड़गंज इंडस्ट्रीयल एरिया, दिल्ली 110092 से मुद्रित।

अंदर के पन्नों में ....

संपादकीय 2

धर्म की मार्केटिंग 4

कला के विरोध का औचित्य 6

रंगमंच पर अतीत 11

युगपुरुष वाजपेयी 13

हिन्दुस्तानी से हिंगलिश 15

चुनावी दहलीज पर उ0प्र0 29

राष्ट्रपति चुनाव की बिसात 38

सामयिकी 45

नोटबंदी के असर 47

युग सेतु में लेखकों के प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक या प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
किसी भी विवाद का निबटारा दिल्ली न्यायालय में होगा।

संपादकीय

सत्यांश

'टका हर्ता, टका कर्ता, टका ही मोक्ष प्रदायक'

टका या रुपए को हर्ता यानी सभी दुखों का हरण करने वाला, कर्ता यानी सभी कार्यों को करने-कराने वाला तथा स्वर्ग व मोक्षप्रदायक कहा गया है। शास्त्रों में धन से धर्म होना और तत्पश्चात् सुख की प्राप्ति बताई गई है -'धनात् धर्मम् ततम् सुखम्।' कहने के लिए ही सही, इसे माया भी कहा जाता है। हाल में ही भारत की सबसे बड़ी करेंसी पॉच सौ और एक हजार के नोट को सरकार द्वारा बंद किए जाने के निर्णय से सीधे साबित हुआ है कि रुपए-पैसे अपने आप में कुछ नहीं होते। उन्हें धन के प्रतीक रूप में कुछ शासकीय मूल्य-भाव दिए गए हैं, इसलिए वे मूल्यवान हैं। धन पराक्रम व परिश्रम का प्रतिफल है, लेकिन आजकल इससे इतर से आए धन का ही प्रभुत्व है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी जब नोटों को बंद करने का एलान किया, तब यही कहा कि ८ नवंबर की मध्यरात्रि से 'लीगल टेंडर' नहीं रहने के कारण ये नोट कागज की रद्दी हो जाएँगे। एकदम छोटे होने के कारण रद्दी रूप में भी इनका इस्तेमाल कठिन है। कुछ पदार्थ स्वयं में तुच्छ होने के बाद भी कानूनी, सामाजिक मान्यता तथा किसी दूसरे वस्तु-कार्य के प्रतीक होने के कारण से काफी महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं, जैसे प्रमाण पत्र व अन्य कागजात आदि। दूसरी ओर हवा, पानी, आग, धूप, अन्न, फल आदि केवल अपने वजूद के कारण महत्त्वपूर्ण हैं, भले ही किसी नाम से इन्हें पुकारा जाए। इनकी मान्यता कभी कोई राजा, सरकार, अदालत या पूंजीपति अपने किसी आदेश से खत्म नहीं कर सकते, क्योंकि इनकी स्वयं की ही सार्थकता-उपयोगिता है। भाषाएँ और उनके शब्द भी वस्तुओं की प्रतीकात्मक व सांकेतिक समझ के लिए प्रयुक्त होने के कारण खुद वस्तु जैसे लगते हैं, पर वास्तव में वस्तु का तिनका भर अंश भी नहीं होते। इसलिए यदि 'चावल' को 'गेहूँ' कहा जाने लगे और 'आप' की जगह 'तुम' प्रयुक्त होने लगे, तो कालांतर में ये शब्द उक्त चीजों के बोधक बन जाएँगे। इसी प्रकार कागज के नोट भी धन के प्रतीक रूप में खास-खास मूल्य के संकेतक हैं, नहीं तो वे कागज के टुकड़ों के सिवा हैं क्या?

समय बीतने के साथ सामान्यतः मुद्रा का मूल्य घटता है, जिसे अर्थशास्त्र की शब्दावली में मुद्रा स्फीति कहा जाता है। बाजार में खरीददारी के समय महसूस होता है कि जो काम तीन साल पहले सौ रुपए में होता था, वह अब डेढ़ सौ में हो पाता है। इसका कारण महँगाई का बढ़ना है। इसलिए मॉगने वाला कहता है कि पॉच-दस रुपए में आजकल होता क्या है, कोई कहता है कि पचास-सौ रुपए से कुछ नहीं होता। कोई कहता है कि एक हजार का नोट तो ठेलेवाला ही तोड़ देता है, कोई कहता है कि महँगाई इतनी है कि पॉच सौ की सब्जी एक छोटे पोलिथीन में चली आती है। कोई कहता है कि पचास हजार, एक लाख में भी क्या होता है, एक ड्राईंगरूम का फर्नीचर भी तो नहीं आता, रुपए कहॉ चले जाते हैं, पता नहीं चलता। इससे आगे कोई कहता है कि अब दस-पंद्रह लाख की कोई कीमत नहीं रही, इससे एक फ्लैट भी नहीं खरीदाता। इसी प्रकार लोग बताते है कि अमुख जगह तो डेढ़ करोड़ से नीचे के फ्लैट हैं ही नहीं और फलॉ स्थान पर दस करोड़ से नीचे की कोई कोठी नहीं है। ऐसा नहीं कि ये सब झूठ बोल रहे होते हैं, बल्कि अपनी-अपनी जगह बिल्कुल सही होते हैं। ऐसे में जिनके लिए दस करोड़ ज्यादा नहीं है, उनके लिए पॉच-दस रुपए की कितनी कीमत होगी? चाहे किसी के लिए सौ-पचास रुपए या पचास हजार, एक लाख का कितना ही कम महत्त्व हो, पर उसके पास यदि कभी दस रुपए न हों और उसके बिना काम बिगड़ जाए, तब दस रुपए का क्या महत्व है - पता चलता है। इस प्रकार पैसे के रहने पर उसका मूल्य कम पता चलता है, न रहने पर अधिक महसूस होता है। रहने पर लाखों-करोड़ों भी कम लगते हैं और न रहने पर दस रुपया भी बहुत बड़ा लगता है।

धन अनेक स्तरों पर बेफिक्र बनाता है। रुपयों से हैसियत बनती और तय होती है। शादी के अवसर पर दूल्हे को नोटों की माला पहनाना, चुनाव के समय उम्मीदवारों को पैसों से तौलना, नाच-गाने व जश्न के समय रुपए-पैसे लुटाकर वर्षा इसी कारण की जाती है। बाट से तौला जाए या फिर रुपए-पैसों, सोने-चॉदी आदि से, तौले जाने वाले व्यक्ति की स्थिति में रत्ती भर भी परिवर्तन नहीं आता, लेकिन उसके इस्तेमाल का अधिकार मिलने पर मनोवैज्ञानिक परितोष, अहं की तुष्टि व सुख का सृजन हो सकता है। हीरे-मोती, सोने-चॉदी शोभा बढ़ाने वाले कीमती पदार्थ हैं, अतः इसे लोग धारण करते हैं। इससे कोई सीधा या परोक्ष लाभ नहीं होता,

उल्टे कंचन और कामिनी के तौर पर नुकसान की आशंका रहती है। कवि का कहना है कि धन का नशा नशीले पदार्थों के मुकाबले बहुत अधिक होता है, क्योंकि नशीली चीज को खाने के बाद मादकता चढ़ती है, जबकि धन को पा लेने मात्र से नशा चढ़ जाता है, जो जल्दी उतरता भी नहीं –

'कनक कनक तै सौ गुनी मादकता अधिकाय।
एक खाय बौराए जग एक पाय बौराए।।'

सोने की कढ़ाई वाले अपने शयनकक्ष, स्नानघर व हवाई जहाज को प्रयोग में लाने वाले ट्रंप अमेरिका के नए राष्ट्रपति बन गए हैं। हीरा-मोती, सोना-चाँदी जहाँ शान-शौकत की पहचान हैं, वहीं अचल संपत्ति के रूप में धन काला हो या सफेद, उसके निवेश का बढ़िया जरिया भी हैं। मोदी सरकार ने वैसे तो मात्र दो नोट बंद करने की घोषणा की, बाकी नोट व सिक्के पहले की ही तरह चलते रहे, फिर भी कुल करेंसी में पाँच सौ और एक हजार के नोटों की उपस्थिति ८६.४ प्रतिशत होने के कारण चारों ओर अफरा-तफरी फैल गई। वह भी तब, जब सरकार ने दो हजार रुपए के नोटों को तुरंत जारी किया, पर इसके खुल्ले की समस्या बढ़ गई। एलान के साथ ही दूकानदारों ने ये नोट लेने बंद कर दिए। उसी रात अच्छी-खासी नकदी रखने वालों ने बिना बजट, आपात स्थिति में बड़ी मात्रा में हीरे, सोने, चाँदी का क्रय किया। आभूषण बिक्रेताओं के लिए तो यह सुनहरा मौका था ही। इसलिए आभूषणों के दाम काफी चढ़ गए, जबकि अघोषित आय वाले तथा कहीं और न खप पाने की संभावना वाले पाँच सौ, हजार के नोटों का बाजार-मूल्य नीचे गिर गया।

सरकार ने हेलीकॉप्टरों से रुपयों की आपूर्ति कराई। नोटों की छपाई के लिए सेना तक को भिड़ाने की खबर आई। अनेक लोग पुराने नोट रखने के बावजूद बिना पैसे वालों की तरह परेशानियाँ झेलते रहे। शादियों की रौनक कई जगह फीकी पड़ गई, दूल्हा-दुल्हन को भी लाइन में लगना पड़ा। शादी वालों को ढाई लाख देने की घोषणा पर अमल कम हुआ। आर्थिक मामलों के सचिव शशिकांत दास ने उपहार में चेक देने का सुझाव दिया। टेलीविजन पर ऐसे आमंत्रण-पत्र के नमूने दिखाए गए, जिस पर चिप चिपकाए गए थे कि कृपया पाँच सौ, हजार के नोट न दें। अवैध दान से बचने के लिए कुछ जगह दानपेटिका सील करनी पड़ी, उस पर लिखे गए कि पाँच सौ, हजार के नोट न डालें। बावजूद इसके, मंदिरों में चढ़ावे में काफी उछाल देखा गया। जनधन खाते व बंद पड़े न जाने कितने खाते एकाएक मालामाल हो गए। ऐसे सफेद रास्तों से कुछ काले धन बैंकों में आए हैं। भिखारी भी पाँच सौ, एक हजार के नोट लेने से मना करते समाचारों में स्थान पाए। सरकारी घोषणाओं से अलग बैंकों ने अपने स्तर पर व्यावहारिक नियम लागू किए, जो गलत व सही दोनों दिशाओं में अनूठे रहे। कई संस्थानों ने पुराने रुपयों को खपाने के उद्देश्य से अपने कर्मचारियों को दो-चार महीने के अग्रिम वेतन दिए। कई दिन धक्के खाकर बहुत-सारे लोग चंद रुपए भी नहीं निकाल सके, वहीं इसी दौरान छापों में लगभग एक अरब से ज्यादा की नई करेंसी पकड़ी गई तथा पाँच सौ करोड़ से अधिक रुपए जब्त हुए हैं। पकड़े गए सोने-चाँदी अलग हैं। बैंकों में भी धाँधलीबाजी होती रही है, पर यह पहली बार बड़े पैमाने पर उजागर हुई है। कालेधन वालों ने बहुत सारे नोट नदी-नालों में बहवा दिए, कूड़े में फेंक दिए, जला दिए। ऐसे में जितनी रकम की करेंसियाँ बैंकों में वापस नहीं आएँगी, वह सीधे कालाधन मानी जाएँगी। पर सवाल है कि क्या इसका सही आकलन हो पाएगा?

लंबे समय से नकदी में ही लेन-देन होता आया है, हालाँकि बैंकों के गठन व विकास ने लोगों को अपने पास जरूरत भर ही नकदी रखने की आदत डलवा दी है। एटीएम आने के बाद यह काम काफी सुगम हो गया। पास रखी जाने वाली बड़ी नकदी बड़ी करेंसी में ही रखी जाती है। अब डिजिटल लेनदेन के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है, या अनेक जगह नकदी के अभाव में मजबूर होना पड़ रहा है। बाकी लेनदेन की तरह इसमें भी जालसाजी होगी। बावजूद इसके, लेनदेन में पारदर्शिता आएगी, इसका एक स्वतः रिकार्ड स्थापित होगा। बिना पैसे पास रखे जीने की आदत बनेगी, जो अच्छी बात है। करदाताओं की संख्या बढ़ने से सरकार की आमदनी बढ़ेगी। विचौलिए की भूमिका कम होगी, उन्हें नए तरीके खोजने होंगे या वैध तरीके अपनाने होंगे। जमीन-मकान की कीमत में कमी आने के साथ कृषि जैसे करविहीन कार्यों की ओर लोगों का झुकाव हो सकता है। उचित प्रबंधन से अल्पकालिक दिक्कत के बावजूद दीर्घकालिक सहूलियतें मिल सकती हैं, अन्यथा संकट बढ़ भी सकता है। अस्तु, कालेधन पर लगाम लगाने के लिए कालेधन के स्रोतों, कार्यों व उत्पादकों को समूल नष्ट करना अधिक आवश्यक है। इसके लिए भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, दलाली आदि को पूरी तरह खत्म करना होगा, खातों की हदबंदी व चकबंदी करनी होगी, यानी एक व्यक्ति के सभी खातों को परस्पर जोड़कर खातों की अधिकतम संख्या निश्चित करनी होगी और नकदी रखने के सीमा-निर्धारण के साथ प्रत्येक नागरिक की संपत्ति का डाटा तैयार कर रिकार्ड में रखने की जरूरत है।

धर्म की मार्केटिंग

❐ राज किशोर सिन्हा

धर्म का प्रश्न बहुत पेचीदा है। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि धर्म क्या है और क्या नहीं है, इस विषय में अच्छों-अच्छों की बुद्धि चकरा जाती है। याज्ञवल्क्य ने धर्म के दस लक्ष्ण बताए हैं-अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, ईमानदारी, पवित्रता (स्वच्छता), इन्द्रिय नियंत्रण, सहानुभूति, सहिष्णुता, त्याग एवं तप। दर्शन शास्त्रों में इसका उल्लेख है। गौतम ऋषि कहते हैं 'यतो अभ्युद्यः निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः' अर्थात् जिस काम के करने से अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों की प्राप्ति हो, वही धर्म है। हमारी राय में धर्म वह है जिसके आधार पर मनुष्य अधिक से अधिक लोकोपकार कर सके, जिससे एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के प्रति उत्तरदायी हो, प्राणिमात्र के प्रति उत्तरदायी हो। हमारा दृढ़ विश्वास है कि धर्म केवल मानसिक पवित्रता से सम्बन्ध रखने वाली चीज है। धन से उसका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होना चाहिए।

यह धन का काल है, धनयुग है। अकूत धन-संपदा संग्रह करने के लिए, धन की उगाही करने के लिए धर्म को एक बहुत ही कारगर माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है, जहाँ बाजार लगता है, जहाँ मार्केटिंग होती है उसका मूल ध्येय मुनाफा कमाना होता है, परोपकार से उसका कोई सरोकार नहीं होता। धर्म का उद्देश्य तो मानव-कल्याण और परोपकार होना चाहिए। लोक-कल्याण के ध्येय से धर्म का प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए।अधिक से अधिक लोगों तक, सुदूर देशों तक धर्म की अच्छी-अच्छी बातों को प्रचारित-प्रसारित करके लोगों को यह समझाया जाना चाहिए कि किस प्रकार धर्म के कल्याणकारी मार्ग का अनुसरण करने से सम्पूर्ण मानव-जाति का कल्याण संभव है। इतिहास में भी उल्लेख मिलता है कि महान सम्राट अशोक ने अपनी पुत्री संघमित्रा को अपने पुत्र महेन्द्र के साथ श्रीलंका और अन्य देशों में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए भेजा था। धर्म का उद्देश्य मुनाफा कमाना नहीं होता और न होना चाहिए। लेकिन जब धर्म की आड़ में मुनाफा कमाने का दूषित उद्देश्य पैदा हो जाए, तब धर्म का भी बाजार लग जाता है, धर्म की भी मार्केटिंग होने लगती है, और बड़े जबरदस्त तरीके से होती है। मार्केटिंग, कारोबार या व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य होता है अधिक से अधिक मुनाफा कमाना। मार्केटिंग या कारोबार प्रलोभन से जुड़ा होता है, बाजार के आकार को बढ़ाने के लिए उन ग्राहकों को लुभाना पड़ता है, जिन्होंने हमारे उत्पाद या सेवा का कभी उपयोग न किया हो। लेकिन कारोबार की मार्केटिंग में करुणा या मानवीय संवेदना का कोई स्थान नहीं होता, जन-कल्याण का तत्व इसमें नदारद होता है, इसलिये झूठे लुभावने वादे भी किये जाते हैं। जैसे, 'फेयर एंड लवली' फेयरनेस क्रीम की मार्केटिंग करने के लिए दूरदर्शन, समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं और अन्य माध्यमों से धुआंधार प्रचार करने के बाद बाजार में इसकी खपत कई गुना बढ़ गई और इसके उत्पादकों को भारी मुनाफा हुआ, जबकि हकीकत में इससे शायद ही किसी की फेयरनेस बढ़ी हो, या फेयरनेस कितनी बढ़ी - यह शोध का विषय हो सकता है। ऐसा भी संभव है कि किसी की त्वचा पर इस क्रीम से उल्टा नुक्सान भी हुआ हो।

भारतवर्ष में लाखों मन्दिर हैं जिनकी वार्षिक आय करोड़ों रूपये है। यह केवल मन्दिरों का ही मामला नहीं है, मस्जिदों और मकबरों की भी करोड़ों-अरबों रूपये की आमदनी है। काशी, वृन्दावन, नाथद्वारा के प्रख्यात मन्दिर, अजमेर ख्वाजा की दरगाह और हजारों संस्थाएं हैं, जहाँ भावुक भक्तों के सोने का मेह बरसता है। इसके अलावा नए-नए पेशेवर लोग भिन्न-भिन्न प्रकार की युक्ति से हमसे चंदे और दान माँगते ही रहते हैं और हम भी अपने पसीने की कमाई से उन्हें कुछ-न-कुछ देना अपना कर्तव्य समझते हैं। कोलकाता, मुंबई, दिल्ली आदि शहरों में कई बड़े-बड़े व्यापारियों के यहाँ एक धर्मादा खाता होता है। वे व्यापारी जितने रूपये का माल ग्राहकों को बेचते हैं, उसमें कुछ धर्मादा भी काट लेते हैं। इस प्रकार से एकत्रित धन लाखों-करोड़ों की संख्या में कई सेठ, मारवाड़ी लोगों के बही-खातों में जमा है। इस धमदि खाते की रकम से वे अपनी बेटी का ब्याह करते हैं, अपने श्राद्ध करते हैं और अपने बेटे का मुंडन और नामकरण संस्कार करते हैं, उस धन से सपरिवार तीर्थयात्रा भी करते हैं। वैसे इसमें भी

एक वह जमाना भी था जब लोग हमारी दिमागी गुलामी से अनुचित लाभ उठाकर हमें स्वर्ग का प्रलोभन देकर हमारा धन लूट लिया करते थे। शायद वह जमाना आज भी पूरी तरह से गया नहीं है। आज हमसे यह छिपा नहीं है कि कई पंडे और पुजारी लंपट, दुराचारी, अनपढ़ और कमीने होते हैं और वे हमारी कमाई के पवित्र धन को मांस, मदिरा और व्यभिचार में बर्बाद कर देते हैं। दान के हजारों लुभावने उदाहरण समझाकर, बताकर, लिखकर इन लोगों ने दान देने के प्रति हमारे मन में बहुत-कुछ श्रद्धा के भाव उत्पन्न कर दिए हैं।

कोई शक नहीं कि मारवाड़ी समाज ने कुछ उच्च श्रेणी के दाता और देशसेवक पैदा किये हैं जिन पर पूरे देश को गर्व है। हम उनपर कोई आक्षेप नहीं लगा रहे हैं।

एक वह जमाना भी था जब लोग हमारी दिमागी गुलामी से अनुचित लाभ उठाकर हमें स्वर्ग का प्रलोभन देकर हमारा धन लूट लिया करते थे। शायद वह जमाना आज भी पूरी तरह से गया नहीं है। आज हमसे यह छिपा नहीं है कि कई पंडे और पुजारी लंपट, दुराचारी, अनपढ़ और कमीने होते हैं और वे हमारी कमाई के पवित्र धन को मांस, मदिरा और व्यभिचार में बर्बाद कर देते हैं। दान के हजारों लुभावने उदाहरण समझाकर, बताकर, लिखकर इन लोगों ने दान देने के प्रति हमारे मन में बहुत-कुछ श्रद्धा के भाव उत्पन्न कर दिए हैं। आज कई शहरों में दान के धन से धर्मशाला, मन्दिर, अनाथालय, बाल सुधार गृह, नारी-निकेतन, विधवाश्रम तथा भांति भांति की संस्थाएँ खुली हुई हैं। इनमें कितनी ही कुकर्मों की जड़ हैं जिनके समाचार हम आये दिन सुनते रहते हैं।

अन्धश्रद्धा ने घर कर लिया है। त्यागी और तपस्वी के बजाय धर्म का आडम्बर करने वाले कथित संत, मौलवी, इमाम, पादरी जैसे लोग धर्म के कर्ता-भर्ता बन बैठे हैं। नरक तथा स्वर्ग की बातें करके अंधविश्वास में डूबे लोगों शोषण चल रहा है। बिकाऊ मीडिया और उनके चैनलों के सहयोग से यह पाखंड और भी अधिक फल-फूल रहा है। गुरु के साथ तो हमारा सम्बन्ध ऐसा होना चाहिए जैसे पूर्वज के साथ उसके वंशज का होता है। अभी धर्मगुरु एक वक्ता मात्र रह गया है। आध्यात्मिकता नहीं के बराबर रह गई है। धर्म एक व्यवसाय हो गया है। बाजारीकरण के इस दौर में अपनी मार्केटिंग बनाये रखने के लिए प्रसारित होने वाले 'सन्तों' के प्रवचन के लिए चैनलों को मोटे पैसे दिए जाते हैं। यह सब इन्वेस्टमेन्ट है। एक प्रसारण के माध्यम से पाँच-सात आयोजन मिल जाते हैं।

धर्म की दूकानदारी, धर्म और धार्मिक आयोजनों की मार्केटिंग इस तरह होती है। धार्मिक संगठन बिल्कुल बाजार की तर्ज पर चलते हैं, और अपने भक्त बनाये रखने के लिए वैसे ही साधन अपनाते हैं, जैसे कोई कम्पनी करती हैं। धर्म इतना बड़ा व्यवसाय बन गया है जिसमे अरबों के वारे-न्यारे होते हैं, और हजारों करोड़ के टर्नओवर होते हैं। पूजा-पाठ, हवन-कीर्तन, प्रवचन, जागरण इत्यादि में भरपूर पैसा लगता है। इनमें इतना इन्वेस्ट इसलिए किया जाता है क्योंकि रिटर्न अच्छा मिलता है। ऐसे-ऐसे भव्य मंदिर, मस्जिद, चर्च बने हैं जिनके निर्माण में सैकड़ों मिलियन डॉलर खर्च हुए हैं।

आप दक्षिण भारत और वृन्दावन के भव्य मंदिरों को देखिये, दुनिया के विशाल भव्य चर्चों, मस्जिदों को देखिये। आपको लगेगा जैसे कि आप किसी धार्मिक डिज्नीलैंड में आ गये हैं। क्या ईश्वर इन आलीशान भवनों में रहते हैं? ये महज अहंकार के प्रदर्शन की वस्तु हैं। आस्था के केन्द्र बने ये धर्मस्थल जबरदस्त आय के केन्द्र भी हैं। यह धंधा धर्म का है। धर्म के नाम पर लोगों में आस्था है। आस्था और विश्वास के नाम पर जब हजारों और लाखों की संख्या में लोग जुड़ते हैं तो वे पैसा चढाते हैं। बड़े मन्दिरों और बड़े संतों से बड़े लोग और बड़े कारोबारी जुड़ते हैं जो करोड़ों, अरबों का अपना काला धन इनके माध्यम से चलाते हैं। उदाहरण के लिए, साईं मन्दिर में कोई व्यवसायी ३०-४० किलो सोने का मुकुट चढ़ाता है। ऐसे एक नहीं, अनेकं दृष्टांत हैं जहाँ बोरों में अवैध धन-मुद्रा मिली है। बड़े-बड़े संत हैं जिन्होंने अपने धन-संग्रह को कभी स्पष्ट नहीं किया।

सीबीआई में इसके ऊपर एक मोनोग्राफ है कि दान में देकर काले धन को कैसे सफेद किया जाता है। मनी-लाउनड्रिंग एक्ट में इसको बहुत गंभीर और दण्डनीय अपराध माना गया है। अभी-अभी हाल में ही आयकर विभाग ने एक संत की २३०० करोड़ की बेनामी संपत्ति का खुलासा किया है। दान से मिले पैसों से रियल एस्टेट और म्युचुअल फंड में निवेश किया जाता था, कर्ज का कारोबार भी चलता था। ऐसे तमाम दृष्टांत सीबीआई, इनकम-टैक्स और प्रवर्तन निदेशालय के नेटवर्क और रडार पर हैं.

एम.एफ.हुसैन की कला के विरोध का औचित्य

❐ कोएनराड एल्स्ट

अनुवादक : राज किशोर सिन्हा

लंदन के हिन्दू मानवाधिकार संगठन द्वारा २००६ में संचालित अभियान से संबंधित पिछली बातों को कोएनराड याद कर रहे हैं। २००६ की पहली

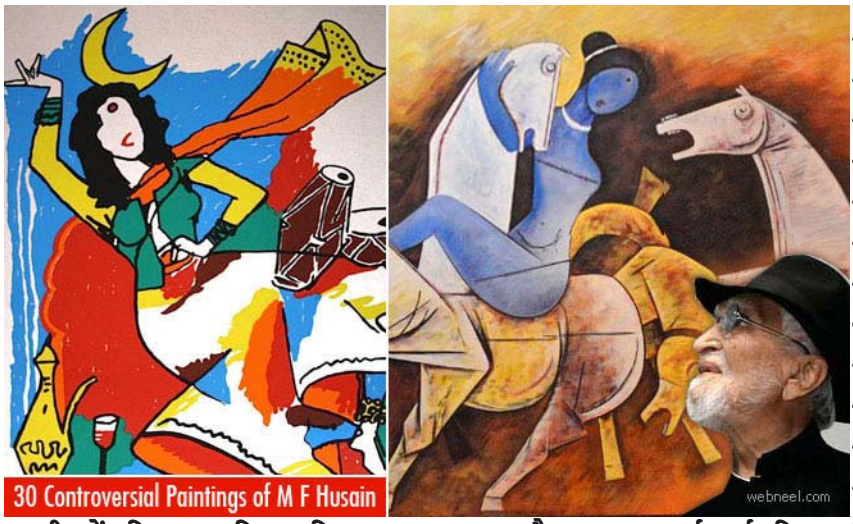

छमाही में दिग्गज मुस्लिम चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन द्वारा हिन्दू देवी-देवताओं के नग्न चित्र बनाने की कई घटनाएँ सामने आयीं, जिसके कारण उनके खिलाफ अदालतों में कम-से-कम छह मुकदमें दायर किये गये। हुसैन प्रदर्शनी, नीलामी, पुरस्कार समारोहों और मुकदमा स्थलों के अलावा न्यूयार्क, वाशिंगटन डीसी, लंदन, मुंबई, दिल्ली, भोपाल और सतारा जैसे प्रांतीय शहरों में १५० से अधिक प्रदर्शन हुए। सारे हंगामों का पूरा ब्यौरा देने का मेरा कोई इरादा नहीं है। केवल इस बुनियादी सवाल पर मैं अपने विचार विकसित करना चाहता हूँ कि क्या कला की स्वतंत्रता के आधुनिक सिद्धांतों के अन्तर्गत देवी-देवताओं का नग्न चित्रण उचित है?

ग्रेट ब्रिटेन के हिन्दू संगठनों में सबसे अधिक सक्रिय हिन्दू मानवाधिकार संगठन ने भारतीय मुस्लिम कलाकार एम.एफ.हुसैन के चित्रों की प्रदर्शनी के खिलाफ विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया था. लंदन के एशिया हाउस में एम.एफ.हुसैन द्वारा बनाई गई हिन्दू देवियों की दो नग्न चित्रकारियों की प्रदर्शनी लगी थी। उसके बारे में टाइम्स ऑफ इंडिया (२४ मई, २००६) ने एक विवरण छापा। प्रदर्शनी का उद्घाटन भारत के उच्चायुक्त कमलेश शर्मा ने किया था। ब्रिटेन के एक हिन्दू फोरम, जिसका दावा है कि २७० हिन्दू संगठन उसके सदस्य हैं, के महासचिव रमेश कल्लिदाई ने टाइम्स अहफ इंडिया को बतलाया "जब पैगम्बर पर बने कार्टूनों के विरोध में ऐसी घटनाएं होती हैं, तब तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह स्वयं इसकी निंदा करते हैं। भारत उन देशों में अग्रणी रहा है जिन्होंने सलमान रुश्दी की पुस्तक 'द सैटेनिक वर्सेज' पर पाबंदी लगाई थी। लेकिन जो लोग हिन्दुओं को आहत और अपमानित किया करते हैं उन्हीं लोगों को कलात्मक स्वतंत्रता का उपभोग क्यों करने दिया जाना चाहिए?"

हिन्दुओं ने एशिया हाउस गैलरी प्रदर्शनी का विरोध किया, क्योंकि उन्हें उन पेंटिंग्स की प्रदर्शनी लगाने पर आपत्ति थी जिसमें हिन्दू देवियों को पाशविक कर्मों में लिप्त दिखाया गया था, हालांकि हिन्दू समूह इस मुद्दे पर चर्चा के लिए प्रदर्शनी के आयोजकों से मिलने के लिए राजी हो गये थे, लेकिन कुछ अज्ञात व्यक्तियों द्वारा उनकी पिटाई कर दी गयी जिन्होंने सभागार में प्रवेश करके कुछ आपत्तिजनक पेंटिंग्स को नष्ट कर दिया। इसके कारण उसके बाद कोई वार्ता नहीं हो सकी और प्रदर्शनी को बन्द कर दिया गया। हिन्दू-विरोधी टिप्पणीकारों ने इस गरिमापूर्ण हिन्दू विरोध को बर्बरतापूर्ण कला-विध्वंस बतलाने में कोई देरी नहीं की। ब्रिटेन के हिन्दुओं ने इस घटना पर बिलकुल स्पष्ट प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की "जब हमारे धर्म और हमारी संस्कृति का तिरस्कार किया जाता है और उसे बदनाम किया जाता है तब ये लोग हिन्दू समुदाय द्वारा शांतिपूर्ण विरोध करने के अधिकार को जायज मानने से भी इनकार करते हैं। शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन करने का अधिकार किसी भी स्वस्थ लोकतांत्रिक समाज का एक अभिन्न अंग है, लेकिन इन हिन्दू-विरोधियों के अनुसार तो हजारों युद्ध-विरोधी विरोध प्रदर्शनों को भी धर्मान्धता और कट्टरपंथ समझा जाना चाहिए. (...) बड़ी समस्या यह है कि हिन्दुओं और हिन्दू धर्म के अपमान का यह पहला मामला नहीं है और इस बात ने हिन्दू समुदाय को लम्बे समय के लिए चिंताग्रस्त कर दिया है और ऐसी ही अपमानजनक घटनाओं के द्वारा दुनिया के अन्य जगहों में भी हिन्दुओं

का उत्पीड़न किया जाता है। यह पश्चिम का माहौल है जहाँ की मीडिया और जनता पूरी दुनिया में हिन्दुओं और हिन्दू धर्म के साथ होने वाले उत्पीड़न और भेदभाव के प्रति उदासीन, अनभिज्ञ और असंवेदनशील रहती है।"

जब लार्ड मेघनाद देसाई, एक प्रमुख नेहरूवादी धर्मनिरपेक्ष, ने इस घटना के बारे में सुना तो उन्होंने तीन तर्क पेश करते हुए एक टिप्पणी की। पहला, प्रदर्शनी पर हमला इसलिए किया जा रहा है क्योंकि एम.एफ.हुसैन एक मुस्लिम हैं। दूसरा, हिन्दू दक्षिणपंथी समूहों ने कलात्मक स्वतंत्रता को कमजोर करने का प्रयास किया है। तीसरा, खजुराहो, तिरुपति और दूसरे मंदिरों में हिन्दू देवियों को विभिन्न प्रकार की कामुक मुद्राओं में देखा जा सकता है। आइये, इन दावों पर गौर करते हैं।

"देवियों के लिए नग्न होना सामान्य बात है।" लार्ड देसाई की तरह एम. एफ.हुसैन ने स्वयं यह दावा किया है कि उनकी पेंटिंग्स में गैर-विक्टोरियन मुद्राओं में देवियों का चित्रण हिन्दू परम्परा का हिस्सा थे।" पिछले ५,००० वर्षों से अजंता और एलोरा की गुफाओं और पवित्र मंदिरों में संजोकर रखी गई कला और संस्कृति पर भारतीयों को गर्व है। वहाँ देवी देवताओं की मूर्तियाँ आवरणरहित हैं।" (सिफी.कहम १३ मार्च, २००६)

हालांकि यह बिलकुल झूठ है कि देवियों को कभी इस प्रकार से संतुष्ट होते हुए बतलाया गया हो, जिस प्रकार हुसैन ने दुर्गा को दर्शाया है। जहाँ तक और भी नग्नमूर्तियों का सवाल है, यह हिन्दू शिल्पकला के नियमों से परे है।

हिन्दू-विश्वदृष्टि में, काम अथवा कामुकता का मानव जीवन की पूर्णता में एक स्थान है। खजुराहो के मंदिरों की बाहरी दीवारों पर कुछ यौन प्रसंगों के चित्रण के पीछे निश्चित रूप से यह विचार हो सकता है, हालांकि ऐसी बात नहीं है कि खजुराहो के मंदिर भवन देवताओं के बीच यौन-क्रिया को दर्शाते हैं। ये नक्काशियाँ केवल बाहर की तरफ हैं, अन्दर देवस्थान में नहीं, और उनमें मानव जीवन के सभी पहलुओं का चित्रण है। वे यह सन्देश देते हैं कि मनुष्य भले ही सांसारिक गतिविधियों में लिप्त हो, लेकिन जीवन के केन्द्र में सदैव देवता स्थित होने चाहिए। उनमें से लगभग दसवें यौन प्रवृति के हैं और इनमें से कोई भी सरस्वती, लक्ष्मी या अन्य देवताओं के सदृश नहीं है। खजुराहो मंदिर के अन्दर शिव, नन्दी, दुर्गा, विष्णु और लक्ष्मी आदि अवतारों की मूर्तियाँ सामान्य वस्त्रों में हैं, जिस रूप में शास्त्रों में वर्णन है, सम्पूर्ण भारत में देवताओं को उसी रूप में दर्शाया गया है और सामान्यतः देवताओं को कहीं भी नग्न अथवा यौन स्थितियों में नहीं दिखाया गया है।

अपवाद, विवाद या विमर्श योग्य हो सकते हैं, एक तांत्रिक देवता-युगल जो तिब्बत में बहुतायत में हैं लेकिन भारत में दुर्लभ हैं, जो एक गरिमापूर्ण मैथुन मुद्रा में दिखाए गये हैं, किसी श्वान-शैली या मिशनरी शैली में नहीं, जो अश्लील साहित्यकारों की पसंद होते हैं, बल्कि कमल-मुद्रा में विराजमान भगवान की गोद में बैठी उनका आलिंगन करती हुई देवी हैं। हर्ष का विषय है कि मेरे पास गणेश की एक प्रतिमा है, जो एक नारी संगिनी के संग मैथुन मुद्रा में हैं, जो संयोगवश लैंगिक शिथिलता के एक प्रतीक के रूप में गणेश पर पहल कोर्टराइट की थीसिस को झूठा बतलाता है। हुसैन की कोई भी विवादित पेंटिंग इन प्रतिमाओं से जरा भी मेल नहीं खाती है।

दूसरा अपवाद नग्न सन्तों की प्रतिमाओं का है, देवताओं का नहीं, जो तपस्या के अनुशासन के रूप में नग्नता का व्रत पालन कर रहे हैं। यह बात मुख्य रूप से जैन महावीर और उनके कुछ अनुयायियों से संबंधित है, लेकिन स्पष्टतः कामुकता से इसका लेशमात्र भी संबंध नहीं है, इन ब्रह्मचारी सन्तों के चित्रण में हुसैन की कामविकृति एक अलग ही मामला है।

हिन्दू मानव अधिकार समूह ने लार्ड देसाई को एक खुले पत्र में विस्तार से यह बतलाया है कि "उनके द्वारा द्रौपदी के नग्नरूप चित्रण से हिन्दू बहुत आहत हुए हैं, जबकि हिन्दू-परम्परा के अनुसार भगवान कृष्ण ने महाभारत में द्रौपदी की लाज बचाई थी।" हिन्दू धर्म के एक सबसे प्रमुख ग्रंथ महाभारत के एक केन्द्रीय प्रकरण में द्रौपदी को अपमानित करने के लिए उसे नग्न कर देने की धमकी दी जाती है और भगवत्स्वरूप नायक कृष्ण उसके शील की रक्षा करते हैं। हुसैन ने दुष्ट कौरवों को अंततोगत्वा द्रौपदी को वस्त्र-विहीन करते हुए दिखलाया है। महाकाव्य की इस कथा से कम से कम इतना पता चलता है कि प्राचीन हिन्दू आखिरकार नग्नता के संबंध में इतने लापरवाह नहीं थे।

इस बिंदु पर एक बात मैं स्पष्ट करना चाहूँगा। हुसैन के द्वारा एक बार देवी सरस्वती का नग्न-चित्रण करने पर कुछ हंगामा मचा था, उस मामले पर मैंने इंटरनेट पर चर्चा की थी। उसमें मैंने यह बतलाया था कि देवी सरस्वती को जापान में बौद्धों के द्वारा बेंजाइतेन नाम से परिचय कराया गया है और इस देवी को नग्न चित्रित किया गया है। वास्तव में, बौद्ध या जापानी कला इतिहास की कई पुस्तकों में बेंजाइतेन की एक नग्न मूर्ति दिखाई गई है (उदाहरणार्थ, लुइस फ्रेडरिक वे डीउ ड्यू बौद्धिस्मे, वामारिया, पेरिस १९९२,

पृष्ठ २२३ एफएफ.) हालांकि, वह मूर्ति मंदिर में नहीं रखी गई है, बल्कि एक संग्रहालय में स्थित है। मन्दिर में इस प्रकार की नग्न मूर्ति को हर सुबह वस्त्र पहनाया जाता है, और भक्तजन उसे केवल वस्त्र धारण किए हुए ही देख सकते हैं। मूर्ति को वस्त्र पहनाना हिन्दू-बौद्ध भक्ति-परम्परा में असामान्य नहीं है, उदाहरणस्वरुप, अफगानिस्तान में बामियान बुद्ध की विशालकाय मूर्तियों को भी वस्त्र पहनाया जाता था। भारतीयों की तुलना में जापानी कम पाखंडी हैं, फिर भी वस्त्र धारण किये हुए रूपों में अपने देवताओं की पूजा करते हैं। उसी प्रकार निर्लज्ज यूनानियों ने भी केवल एफ्रोडाईट, कामुक प्रेम की देवी, को नग्न दर्शाया है, लेकिन आर्टेमिस, एथेना, डिमीटर और अन्य देवियाँ सदैव वस्त्र-आवरण में दिखाई गई हैं.

"नग्नता आधुनिक कला में सामान्य बात है।"

'द गार्जियन' में बौद्ध जापानी कला इतिहास की कई पुस्तकों में २ जून, २००६ को प्रकाशित एक पत्र में हिन्दू ह्यूमन राइट्स समाचार ने दलितों के पूर्ण एकीकरण, कन्या-भ्रूण-हत्या के विरुद्ध कारवाई इत्यादि अपने अन्य प्रगतिशील वक्तव्यों के अनुरूप इस आरोप का खण्डन किया कि वह कला में रूढ़िवाद के विरोध का प्रतिनिधित्व करता है -"हमने एशिया हाउस गैलरी का विरोध किया, क्योंकि हमें उनके इस निर्णय पर एतराज था कि उस पेंटिंग्स प्रदर्शनी में हिन्दू देवियों को पाशविक कर्मों में लिप्त दिखाया जाए (२६ और ३० मई के पत्र)। मेघनाद देसाई का विचार है कि हिन्दू मंदिरों में ऐसी मूर्तियाँ पाई जा सकती हैं, लेकिन जैसा कि हम उनको लिख चुके हैं कि हम उनके इस वक्तव्य का विरोध करते हैं और उन्हें इस सन्दर्भ में साक्ष्य प्रस्तुत करने की चुनौती देते हैं। हमारे सभी वक्तव्य इस बात की पुष्टि करते हैं कि हम हमेशा से यह कहते रहे हैं कि हम कला-विरोधी नहीं हैं। आखिरकार, अभिव्यक्तियों की श्रृंखला हमें कहाँ प्राप्त हो सकती है! यह हमें हिन्दू साहित्य, कविता, चित्रकला, नृत्य, संगीत, मूर्तिकला, नाटक, आध्यात्मिक महाकाव्यों, स्थापत्य कला, वेशभूषा और आभूषणों में मिलती है। लेकिन जब हम हिन्दू-कल्पना और प्रतीकों को शौचालय की सीटों, बिकनी, पत्रिका के कवर इत्यादि पर देखते हैं तो यह समझना आसान हो जाता है कि जब पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि जैसे देशों में हिन्दुओं की दुर्दशा पर प्रकाश डालने की बात आती है तो मीडिया और राजनीति में इतने सारे लोग क्यों अनभिज्ञ और उदासीन बने रहते हैं।"

"क्या स्वीकार्य है और क्या स्वीकार्य नहीं है, इससे संबंधित समकालीन मानकों में निश्चित रूप से एक बहुलवाद और तरलता है। फिर भी कुछ मानक अभी भी अटल हैं और तुलनात्मक विधि से उनका पता लगाया जा सकता है। नग्नता के मसले को विभिन्न सन्दर्भों में रखकर देखें कि क्या-क्या स्वीकार किया जाता है। एक सटीक उदाहरण, जो लोग हुसैन द्वारा बनाये गये हिन्दू देवियों के नग्न चित्रों का समर्थन करते हैं, उन्हें सकारात्मक भाव से इस प्रश्न का उत्तर देना चाहिए कि क्या वे लोग अपने प्रियजनों की नग्न पेंटिंग्स की प्रदर्शनी आयोजित होना पसंद करेंगे?"

हिन्दुओं को यह एहसास नहीं है कि पश्चिम में कुछ दिखाऊ लोग ऐसे हैं जिनके प्रियजनों को या खुद उनको भी अगर नग्न दिखाया जाए तो उन्हें कोई परेशानी नहीं होगी, लेकिन लार्ड देसाई के बारे में यह सच नहीं हो सकता है। एम.एफ.हुसैन के बारे में तो इसकी और भी कम संभावना है और इसके लिए हुसैन की खुद की पेंटिंग्स स्वयं प्रमाण हैं।

हुसैन कहते हैं, "नग्नता बेगुनाही का एक रूप है।" हुसैन खुद को "भारतीय 'समग्र' संस्कृति के निर्माण में लगा एक विनम्र और उत्साही योगदानकर्ता बतलाते हैं, लेकिन उनकी पेंटिंग्स के सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि उनके मन में बसी नग्नता बेगुनाह नहीं है। हुसैन ने पैगम्बर की बेटी फातिमा को पूरे कपड़ों में दिखलाया है। उसी प्रकार, अपनी माँ को पूरे कपड़ों में, मदर टेरेसा को पूरे कपड़ों में, मुस्लिम कवियों फैज और गालिब को पूरे कपड़ों में, एक अनाम मुस्लिम महिला को पूरे कपड़ों में दिखलाया है, लेकिन देवी दुर्गा को सम्मानरहित और नग्न स्थिति में, गणेश के सिर पर देवी लक्ष्मी को नग्न, देवी सरस्वती को नग्न, द्रौपदी को नग्न, रावण की जाँघ पर बैठी सीता के साथ हनुमान को नग्न और शरीर पर लिखे प्रान्तों के नाम के साथ भारत माता को नग्न दिखलाया है। इससे भी कहीं अधिक, पूरे कपड़े पहने एक मुस्लिम राजा के साथ एक ब्राह्मण को नग्न, और २० वीं सदी के कुछ नेताओं के साथ गाँधी को सिर कटी अवस्था में, और हिटलर को नग्न दिखलाया है।

अतः हिन्दू समूह के निष्कर्ष में दोष निकालना कठिन है, "एम.एफ. हुसैन जिस देवी-देवता या व्यक्ति से नफरत करते हैं, उसका वह नग्न रूप में चित्रण करते हैं। वे पैगम्बर की माँ, अपनी माँ, बेटी और सभी मुस्लिम व्यक्तित्वों को पूरे कपड़े पहने दिखलाते है, लेकिन वहीं हिटलर के साथ-साथ हिन्दुओं, हिन्दू देवी-देवताओं को नग्न दिखलाते हैं। यह हिन्दुओं के प्रति

उनकी घृणा को साबित करता है। ''हुसैन के संरक्षकों को हिन्दू मानव अधिकार संगठन यह सुझाव देते हैं कि "अगर कला के ये व्यापारी पैगम्बर मोहम्मद और अपने प्रियजनों के नग्न चित्र बनाने की हिम्मत दिखलाएँ और कला के नाम पर इनकी प्रदर्शनी लगाएँ, तो इस बात की सराहना की जायेगी।

कुछ धर्मनिरपेक्ष आधुनिक चित्रकार, बिना किसी दुर्भावना के हिन्दू देवी देवताओं का नग्न चित्रण करते हैं, लेकिन जब वे कहते हैं कि इसके पीछे उनके मन में तिरस्कार करने का कोई इरादा नहीं है तो बात समझ में आती है। लेकिन गौरतलब है कि एम.एफ. हुसैन उनमें से नहीं हैं। वे एक धर्मांध मुस्लिम हैं जो हिन्दू धर्म के प्रति इस्लाम की घृणा को एक नई अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। इतिहास में यह दर्ज है कि मुस्लिम शासकगण हिन्दू देव प्रतिमाओं को सड़क पर फेंककर उन्हें पैरों से रौंदकर या शौचालयों में डालकर अपनी घृणा व्यक्त करते रहे हैं। देवी-देवताओं को अपमानजनक मुद्राओं में चित्रित करके हुसैन भी वही कर रहे हैं। जहाँ तक धर्मनिरपेक्ष कला संग्राहकों का सवाल है जो कलात्मक स्वतंत्रता के नाम पर हुसैन का समर्थन करते हैं, आधुनिकता की दृश्य भाषा और कलात्मक स्वतंत्रता की उदारवादी बयानबाजी का उपयोग करते हुए घृणा का सदियों पुराना इस्लामिक सन्देश प्रेषित करने के लिए हुसैन उनका इस्तेमाल करते हैं -

''हुसैन एक मुस्लिम हैं।''

जो हिन्दू संगठन संवेदनशीलता की गाड़ी में सवार हैं, वे आमतौर पर वही हैं जो इस्लाम के साथ किसी भी बखेड़े से किनाराकशी करते रहे हैं। अगर अवसर मिलेगा तो वे मुसलमानों से हाथ मिला लेंगे, केवल यह दिखाने के लिए कि वे कितना नेक काम कर रहे हैं। कई हिन्दू संगठनों, जैसे हिन्दू अमेरिकन फोरम ने डैनिश मोहम्मद के कार्टून की निंदा करते हुए प्रस्ताव पारित किया है। आंध्र प्रदेश राज्य विधान सभा में हिन्दू राष्ट्रवादी भारतीय जनता पार्टी ने एक ऐसे ही प्रस्ताव का समर्थन किया जो सर्वसम्मति से पारित भी कर दिया गया और वह भी विशेष रूप से उन तथाकथित धर्मनिरपेक्षतावादियों के समर्थन से, जबकि इन नासमझ हिन्दुओं को मुसलमानों या धर्मनिरपेक्षतावादियों से इसके बदले में कृतज्ञ अभिव्यक्ति के लिए कोई संकेत भी नहीं मिले। दरअसल अब, जब हिन्दुओं ने ही ईशनिंदा का आरोप लगाया तो उनके साथ एकजुटता जताने के लिए कोई भी नहीं आया.

फ्रांस और जर्मनी में तो कार्टून को पुनः प्रकाशित करके प्रमुख मीडिया डैनिश कार्टूनिस्ट के समर्थन में आ गया, ब्रिटिश और अमेरिकी मीडिया ने मामले की गंभीरता को कम करके बतलाया और कार्टून दिखाने से परहेज किया, शायद इस चिंता में कि इराक में उनके सैनिकों के लिए स्थिति बदतर न बन जाय। किसी भी कीमत पर, मुस्लिम संवेदना को नाराज न करने के लिए वे अपने तौर-तरीकों से बाहर भी निकले।

हिन्दू मानव अधिकार समाचार के एक पूर्व वक्तव्य के अनुसार, "हम समझते हैं कि ब्रिटेन में मीडिया ने एक सुविचारित फैसले के तहत मोहम्मद के कार्टून को प्रकाशित नहीं किया। और हम यह भी समझते हैं कि किसी भी शिक्षाविद ने (या मेघनाद देसाई जैसे लोगों ने) इस निर्णय का विरोध नहीं किया, बल्कि बहुत संभावना है कि वे मीडिया के निर्णय की सराहना करेंगे। लेकिन, जब हिन्दू संवेदनाओं की बात आती है तो अलग मानक लागू होने लगते हैं। एक मुस्लिम चित्रकार की ''कलात्मक स्वतंत्रता के लिए मेघनाद देसाई हिन्दू देवी-देवताओं को निशाने पर ले लेते हैं।'' 'द गार्जियन' को लिखे अपने पत्र में हिन्दू मानव अधिकार समाचार पत्र बतलाता है, ''पूरी गंभीरता से वे हम पर यह आरोप लगाते हैं कि एम.एफ.हुसैन के धर्म की वजह से हमने यह मुद्दा उठाया है। यह बात पूरी तरह से निराधार है। हमें आपसी विश्वास के तहत किये गए अपने कार्यों पर गर्व है, और उनके समुदाय का दानवीकरण किये जाने के प्रयासों को समाप्त करने में उनका समर्थन करने के लिए हमने मुस्लिम नेताओं से रेडियो पर बात की है।''

एक अन्य कार्यकर्ता समूह, मुंबई स्थित हिन्दू जनजागृति समिति अपने जवाब में यह दावा करती है कि उसने "हिन्दू चित्रकारों जैसे सुभाष अवचत, ध्यानेश सोनार, महेन्द्र पंडित आदि के द्वारा हिन्दुओं और हिन्दू धर्म का जानबूझ कर किये गये अपमानों के खिलाफ कई अभियानों का संचालन किया है।" जो भी हो, हिन्दूविरोधी धर्मनिरपेक्षतावादी बहुत बड़ी संख्या में हैं जो जन्म से तो हिन्दू हैं, लेकिन ये चित्रों के माध्यम से हिन्दू धर्म का अपमान करने में रूचि रखनेवाले लोग हैं। ये हिन्दू धर्म के खिलाफ केवल प्रतिक्रिया ही नहीं व्यक्त नहीं करते, बल्कि इस्लाम के प्रति प्रतिबद्धता भी दिखलाते हैं।

एम.एफ.हुसैन का मामला इनका मिलाजुला रूप है, धर्मनिरपेक्षतावादियों ने हिन्दू धर्म को अपमानित करने में निश्चित रूप से एक बड़ी भूमिका भूमिका निभाई है, लेकिन सबसे बुनियादी कारण है, मूर्तिपूजा के प्रति उनके दिल में गहरी जमी हुई घृणा। डैनिश मोहम्मद कार्टून से संबंधित विमर्श में मुसलमान बड़बेसब्रीसे

१३ अप्रैल, २००६ को इस्तांबुल में आयोजित इस्लामिक सम्मलेन में संयुक्त राज्य के महासचिव कोफी अन्नान के वक्तव्य का उल्लेख करते हैं, जिसमें उन्होंने बुनियादी स्वतंत्रता के महत्व के साथ-साथ अन्य संस्कृतियों के प्रति संवेदनशीलता की जरूरत पर भी बल दिया। "हमें इस बात का विशेष ख्याल रखना चाहिए कि अधिकारों के साथ उत्तरदायित्व भी अन्तर्निहित होते हैं, और किसी भी समूह या व्यक्ति को नीचा दिखाने, अपमानित करने के लिए इनका दुरूपयोग नहीं किया जाना चाहिए।" लेकिन ये मुसलमान, गैर-मुस्लिम संस्कृतियों के साथ व्यवहार में हृदय से इस कहावत को चरितार्थ करने के लिए अभी परिपक्व नहीं हैं।

हिन्दू मानवाधिकार समूह के विपरीत, जिसने आधुनिक दृष्टिकोण के साथ पूर्ण समन्वय कर लिया है, कई हिन्दू हिमायती समूहों ने हुसैन की पेंटिंग्स पर रूखी, अकल्पनाशील, अपरिष्कृत और दमनात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की है। उदाहरण के तौर पर, हिन्दू जनजागृति समिति ने निम्नलिखित मांगें रखीं - "१. कश्मीर मिशन नीलामी से हुसैन के सभी आपत्तिजनक चित्रों को तत्काल हटाया जाये. २. एम.एफ.हुसैन की प्रदर्शनी को सामजिक रूप से बहिष्कृत किया जाये, ताकि भविष्य में कोई भी ऐसी गलती करने की जुर्रत न कर सके।" और फिर चेतन भट्ट एक लंदनवासी राजीनीति विज्ञान के प्रोफेसर जिन्होंने हुसैन का समर्थन किया, और ऐसे अन्य बुद्धिजीवियों को नफरत फैलाने के आरोप में गिरफ्तार किया जाए।

कार्यालयों और कला दीर्घाओं में एम.एफ.हुसैन की पेंटिंग्स का समर्थन करने के लिए एम.एफ.हुसैन, मेघनाद देसाई और अन्य का सामाजिक बहिष्कार किया जाये।"

हिन्दू धर्म के लिए यह कोई शुभ संकेतक नहीं हो सकता, अगर इसके कार्यकर्ता बिलकुल प्रतिक्रियाशील, भावुक और दमनकारी सोच से बाहर न निकल सकें। जो लोग एम.एफ.हुसैन की अपमानजनक पेंटिंग्स के समर्थन में आगे आए, उन पर हिन्दूविरोधी होने का संदेह तो किया ही जा सकता है, लेकिन वह अंततः उनके विशेष हित से संबंधित बात है। गिरफ्तार करने या अन्यथा उन्हें परेशान करने की उनकी राय को न तो खुले विमर्श की प्राचीन हिन्दू परम्परा में और न ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के आधुनिक पश्चिमी ढाँचे में सही कारण माना जा सकता है।

फिर भी उस ढाँचे के अन्तर्गत अपमानजनक प्रथाओं के उन्मूलन के उद्देश्य से लोगों को राजी करने की कोशिश करते रहना विधिसम्मत है। जूते या अंडरवियर पर हिन्दू देवी-देवताओं का चित्रण करने वाली कम्पनियाँ हिन्दू प्रदर्शनकारियों के साथ मैत्रीपूर्ण बातचीत में उन उत्पादों को वापस लेने पर सहमत हो गई हैं। इन मामलों से संबंधित लोग सामान्यतः हिन्दू संस्कृति और दक्षिण एशियाई राजनीति से अनभिज्ञ हैं और उनकी अनुचित चालबाजियों के पीछे एक मूर्खतापूर्ण मासूमियत है। सही जानकारी हो जाने के बाद वे अपने "कलात्मक स्वतंत्रता के अधिका" पर जोर नहीं देते हैं।

नफरत से भरे धर्मनिरपेक्षतावादियों और मुसलमानों के साथ बात अलग हो सकती है। एम.एफ.हुसैन मामले में जो विरोध प्रदर्शन हुआ, हिन्दू विरोध केवल उन्हें और अधिक धृष्ट एवं बात को रगड़ने के लिए ज्यादा उत्सुक बनाता है। वहाँ भी, मेरा यह मानना है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मामले में

यह सराहनीय है कि हिन्दुओं में

यह उत्तम प्रवृत्ति है कि वे अंडरवियर या शौचालय की सीटों पर यीशु या मोहम्मद की छवि का चित्रांकन नहीं किया करते हैं। लेकिन यह अफसोस की बात है कि वे अपने आलोचक समुदाय की जुबान बन्द करते हैं और अपने घोषित दुश्मनों के सिद्धांतों पर एक स्पष्ट दृष्टि डालने से परहेज करते हैं।

प्राचीन हिन्दू और आधुनिक अंतरराष्ट्रीय अभिव्यक्ति के मानकों का सम्मान करते हुए हिन्दुओं को आत्म-नियंत्रण पर जोर देना चाहिये। यह बहुत आवश्यक है और सबके दीर्घकालिक हित में है। बहुत से हिन्दू अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्व नहीं देते हैं, इसका एक कारण यह है कि वे स्वयं कभी इसका उपयोग नहीं करते हैं, कम से कम उन मामलों में जहाँ यह विवाद भड़काने वाला हो। कोफी अन्नान की उपरोक्त चेतावनी का अनुपालन अधिकांश हिन्दुओं द्वारा ईमानदारी से किया जा रहा है जिसका दुरूपयोग मुसलमान अपने आलोचकों को धमका कर चुप कराने के लिये करते हैं।

हिन्दू बिना किसी माँग या दबाव के मुसलमानों और ईसाइयों का अपमान करने की कोशिश नहीं करते। यह सराहनीय है कि हिन्दुओं में यह उत्तम प्रवृत्ति है कि वे अंडरवियर या शौचालय की सीटों पर यीशु या मोहम्मद की छवि का चित्रांकन नहीं किया करते हैं। लेकिन यह अफसोस की बात है कि वे अपने आलोचक समुदाय की जुबान बन्द करते हैं और अपने घोषित दुश्मनों के सिद्धांतों पर एक स्पष्ट दृष्टि डालने से परहेज करते हैं। अगर वे एक बार ऐसा करने की कोशिश करें, तो अभिव्यक्ति के लिए कानूनी रूप से सुनिश्चित की गयी, स्वतंत्रता की आवश्यकता को वे शीघ्र ही महत्व प्रदान करने लग जायेंगे।

सम्राट अशोक : वर्तमान के पटल पर अतीत का मंचन

दया प्रकाश सिन्हा का नाटक 'सम्राट अशोक' तेईस सौ साल पूर्व के ऐतिहासिक इतिवृत्त को वर्तमान या कहें कि हाल-फिलहाल की नव्यतम पटी पर उतारने का सीधा प्रयास है, हालाँकि लेखक के मन में पड़े इस प्रयास के बीज-बिन्दु को रूपाकार ग्रहण करने में पूरे पैंतीस वर्ष लग गए। अशोक भारतीय इतिहास का जाना-पहचाना नाम है। ऐसे में विषयवस्तु की ताजगी व रोचकता की दृष्टि से उस पर नाट्य-रचना जोखिम भरा कार्य है। फिर पुरातन इतिहास को अत्याधुनिक तकनीक से लैस रंगमंच पर उतारना आसान भी नहीं होता। यह कार्य मुर्दों को जिलाने का दुस्साहस भी नहीं हो सकता -

जब भी अतीत में जाता हूँ,
मुर्दों को नहीं जिलाता हूँ।
पीछे हटकर फेंकता बाण,
जिससे कंपित हो वर्तमान।
-दिनकर

दया प्रकाश सिन्हा ने भी वर्तमान संदर्भ में अतीत को मंच पर लाने का कार्य किया है। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के पूर्व निदेशक देवेन्द्र राज अंकुर ने इस बात को प्रमाणित किया है -''सम्राट अशोक को ऐसे रूप-रंग और छवियों में उकेरा गया है कि वह सुदूर अतीत का अशोक न होकर आज के किसी राजनीतिज्ञ, प्रशासक अथवा शासक का सहज ही प्रतिबिंब जान पड़ने लगता है - इस दृष्टि से यह नाटक सर्वथा सार्थक, सामयिक और सर्वकालीन रहेगा।'' डा. सूर्य प्रसाद दीक्षित के मत में भी ''नाटककार ने अशोक के माध्यम से जीवन की निरर्थकता और असंगतता को रेखांकित किया है, जो अंततः एक सार्वभौमिक सत्य है।'' अशोक का ही क्यों, किसी भी छोटे-बड़े व्यक्ति का जीवन विविधानुभवों का समुच्चय होता है; उसमें फूल के साथ काँटे, हास्य के साथ रुदन, जटिलताओं व कमजोरियों के साथ उदासीनता-निस्संगता भी होती है। कलाएँ जितनी विशदता में इन्हें समेट पाती हैं, उतनी ही जीवंत होती हैं। फिल्म, नाटक, उपन्यास, महाकाव्य आदि आकार में कैसे भी हों - उनके लिए यही कसौटी सर्वोचित है।

'सम्राट अशोक' को तो स्वयं लेखक ने जीवनीपरक नाटक यानी 'बायोपिक' कहा है; लेकिन यह उबाने-उकताने वाला न बन जाए, इसके प्रति सतर्कता बरती है। चूँकि 'प्रस्तुति की अवधि किसी भी हालत में सवा दो घंटे से अधिक नहीं होनी चाहिए', इसलिए पूरे सत्तर साल के अशोक के जीवन को सवा दो घंटे में बीस दृश्यों में बाँटकर रंगमंच पर उतारने की कोशिश है। ऐसा संभव भी इसलिए हो पाया है, क्योंकि सिन्हा जी खाली लेखक की दृष्टि से नहीं लिखते-सोचते, बल्कि अभिनेता, रंगकर्मी व निर्देशक होने का भी अच्छा-खासा व्यावहारिक अनुभव व्यक्त करते हैं -''नाटक में अधिक पात्र नहीं होने चाहिए! अधिक दृश्य नहीं होने चाहिए! सीधे सपाट मंच पर बिना 'सेट्स' के नाटक हो जाए तो सबसे अच्छा!कृक्योंकि महँगी प्रस्तुति अधिकांश नाट्य दलों की हैसियत से बाहर होती है। और महिला पात्र! उसकी कमी तो सदा ही रहती है।'' लेकिन इसके बिना भी तो नाटक परिपूर्ण व सरस नहीं हो सकता। 'सम्राट अशोक' में चार नारी पात्र हैं, देवी, तिष्यरक्षिता और नंदिता ने नारीत्व का संस्पर्श देकर जीवन जगत के जटिल, विद्रूप, शुष्क वातावरण को शृंगारिक, मनमोहक व कामुक प्रेम से संयुक्त किया है।

आरंभ में देवेन्द्र राज अंकुर का संक्षिप्त पुरोवाक् व सूर्य प्रसाद दीक्षित की भूमिका से 'सम्राट अशोक' की विशिष्टताओं व संभावनाओं का पता चलता है। स्वयं नाटककार ने शोधपरक

व शिक्षाप्रद लंबे 'नाटककारीय' में ऐतिहासिक उलझनों व रचना-प्रक्रिया की सीमाओं व व्यावहारिक कठिनाइयों को न केवल इंगित किया है, अपितु उन्हें सुलझाते हुए नाटक की उद्देश्यपूर्ण समझ व मंचन को बहुत स्पष्ट व आसान बना दिया है, वहाँ संक्षिप्त कथासार भी लगभग है। घटनाओं को उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यों तक सीमित रखा गया है। अशोक के मूल जीवनवृत्त से छेड़छाड़ न करते हुए भी मौलिक उद्भावनाओं द्वारा रंजकता और समसामयिकता का संयोजन है, जिसका स्पष्ट उल्लेख पहले ही भूमिका में कर दिया गया है। कौन-सी घटनाएँ मंच पर उतरनी चाहिए और कौन सी सूच्य होनी चाहिए - इसका सही-यही ख्याल रखा गया है। नाटक को अंतिम रूप देने से पहले मंचन कराकर दृश्यता का आकलन करने तथा उसमें दूसरों की

सम्मति के अनुरूप संशोधन व परिवर्द्धन करने की प्रवृत्ति वाली सावधानी के कारण सिन्हा जी की नाटकीय कसावट में कमियाँ नहीं रह पातीं। यह नाटक भी इसका नमूना है। इसे साहित्यिक मानदंडों पर खरा उतरने तथा मंच पर भी उतना ही सफल सिद्ध होने लायक बनाया गया है, किंतु इसमें हल्की-सस्ती चुहलबाजी की बजाय सशक्त संवादों के माध्यम से तीक्ष्ण विचारों एवं जीवन दर्शन का गहरा प्रवाह आद्योपांत है; समसामयिक जरूरतों को सन्निहित करके दीर्घकालिक जीवन मूल्यों की स्थापना है। इसके लिए मानव मनोविज्ञान का समझदारीपूर्ण सहारा लिया गया है।

यथार्थ जीवन के नाटकीय रूपान्तर में पक्ष-विपक्ष, धात-प्रतिघात, द्वन्द्व-निर्द्वन्द्व, उलझाव-सुलझाव जितने सन्निकट रहते हैं, कथाक्रम में उतना ही धार-निखार आता है। 'सम्राट अशोक' में प्रतिनायक पक्ष बहुत दूर के न होकर नायक पक्ष से ही छिटके व बिदके हुए लोग हैं, जिनके बिल्कुल व्यावहारिक नजदीकी वार्ता से चरित्रोद्घाटन के साथ-साथ घटना-चक्र की संरचना सुगठित हुई है।

नाटक में बाहरी संघर्ष कम दृष्टिगत होते हैं अथवा मंच से बाहर ही रहते हैं, पर आंतरिक संघर्ष रंगमंच पर सदैव उपस्थित रहता है। पूरक-विरोधी मनोभावों की सुंदर टकराहट की स्थिति में क्रियात्मकता प्रखर होती गई है। राजनीति की विद्रूपता, कुटिलता, कुप्रचार, दावपेंच सर्वत्र विद्यमान है, किंतु एकरसता का उबाऊपना नहीं हैं। संवाद की भाषाशैली ही नाटक के प्राण होते हैं, 'सम्राट अशोक' में छोटे-छोटे एक दूसरे से गुँथे संवाद हैं। भाषा पात्रों-चरित्रों के अनुकूल स्वाभाविक, गरिमापूर्ण व सुरम्य है, जहाँ व्यंग्य, कुटिलता के साथ भी रसात्मकता अनुस्यूत है। दृश्य अधिकतर छोटे, पर जीवंत हैं। वार्तालाप के छोटे शब्द मात्र से लंबी-चौड़ी घटना का रहस्योद्घाटन होता है, जैसे- अशोक कहता है - 'महाराज ने उसको भी बुलवाया है?' राधागुप्त - 'उसी को तो बुलवाया है।'

नाटक की शुरुआत देवी के आने पर अशोक द्वारा उसकी प्रतीक्षा की सूचना देने से होती है। जैसे दर्शक नाटक के आरंभ की प्रतीक्षा में हैं, वैसे ही अशोक भी देवी के आगमन की इंतजारी में। दोनों की प्रतीक्षा व मिलन-प्राप्ति की एकाकारता वाली शुरुआत बाँधने वाली है। अशोक प्रसन्न होकर कहता है - 'ओह देवी! तुम आ गईं! हम तुम्हारी ही ,प्रतीक्षा कर रहे थे।' देवी - 'सच ही तो कहती हूँ। तुम अशोक! उज्जयिनी के शासक। तुम्हारे न दिन का पता, न रात का। काम, बस काम। दिन-रात काम में व्यस्त रहते हो। तुम्हारे पास इतना समय नहीं कि स्मरण रख सको - कोई देवी नाम की स्त्री है।' यहाँ अशोक की व्यस्तता ही नहीं, पूरे समाज की व्यस्तता निदर्शित है, उसकी भी जो सारा काम-धाम छोड़कर नाटक देखने पहुँचता है।

नाटक के अठारहवें दृश्य में अशोक के द्वारा राजदंडविधान का उत्कर्ष उदाहरण तिष्यरक्षिता को दंडित किए जाने पर झलकता है, लेकिन उन्नीसवें दृश्य में सब कुछ उल्टा-पुलटा हो गया है। अशोक राजा के रूप में राजमुकुट, खड्ग लाने का आदेश देता है तो नंदिता बताती है कि ये सब नहीं मिल रहे हैं। सैनिक को वह जो कुछ करने को कहता है, सैनिक 'आज्ञा नहीं है', 'आज्ञा नहीं है' कहकर असमर्थता जताता है और अंततः अशोक को पता चलता है कि वह बंदी है। अंतिम बीसवें दृश्य में वह इस स्थिति को परिस्थितिवश स्वीकार कर लेता है -''पता नहीं चला - कब, कब संध्या की लालिमा फैली, और कब, धीरे-धीरे अँधियारा छा गया, और, लौटने की बेला भी - आ पहुँची।'' यह कहते हुए ध्यानमग्न हो जाता है। फिर उसके लिए मौर्य साम्राज्य की सीमा से बाहर जाने के परामर्श के साथ व्यवस्था कर दी जाती है, परंतु वह इस पर सोचने का कहकर अंततः ठुकरा देता है -''राधागुप्त, हमने मध्याह्न के उद्दाम प्रकांड सूर्य को धीरे-धीरे संध्या में ढलते देखा है। अब हमें रात्रि की कालिमा की प्रतीक्षा है। हम जानते हैं जीवन और मृत्यु का अंतर्संबंध, जय में अंतर्निहित पराजय और सुख-दुख की जुगलबंदी। माया के आवरण में छिपे जीवन के सत्य का हमने साक्षात्कार किया है। अब हम तथागत की शरण में हैं। हम कारागार में भी मुक्त हैं। हम नहीं जा रहे हैं।'' यह धम्माशोक के किसी रूप में राजसी अंतर्मानस का ही निनाद है।

इस प्रकार नाटक का प्रारंभ अशोक की राजा बनने की जागृत होती लालसा से होता है, फिर वह प्रयत्नपूर्वक राजा बनता है और अंत में धर्म के लिए बेहिसाब दान देकर राजकोष रिक्त कर देने के कारण पदच्युत कर दिया जाता है। इसका दुख उसे विरक्ति की ओर ले जाता है।

वस्तुतः 'नाटकीय पटाक्षेप' का जो मुहावरा रूढ़ है, वह यहाँ अशोक के राजा से एकाएक बंदी बनना व विरक्त होना है, अनहोनी का होना है। संपूर्णतः इस नाटक में राजनीतिक वातावरण की कुटिलता व छल-प्रपंच के साथ सांसारिक रागात्मक संबंधों की मर्यादा व मर्यादाहीनता और जीवन की निस्सारता उजागर हुई है।

कुल मिलाकर नाटक में जो कुछ जैसे दर्शाने का ध्येयनिष्ठ प्रयत्न है, उसे वैसे ही दर्शाने में बखूबी सफलता मिली है। क्या, कैसे व क्यों दर्शाया गया है, इसका नाटक के आरंभ में स्पष्ट उल्लेख है। ऐसे में जो है, उसे ही देखना उचित है; जो नहीं है, उसे खोजने की कोशिश करना व्यर्थ है। 'सम्राट अशोक' अपने आप में साहित्यिक व रंगमंचीय नाटक का आधुनिक प्रतिमान बनता दिखता है, तो फिर किसी अन्य निकष पर इसका परीक्षण क्यों किया जाए!

भारतीय राजनीति के युगपुरुष हैं अटल बिहारी वाजपेयी

ब्रजेश राजपूत

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक से लेकर प्रधानमंत्री तक का सफर तय करने वाले युग पुरुष अटल बिहारी वाजपेयी जी का जन्म ग्वालियर में २५ दिसम्बर १९२४ को हुआ। अटल जी के पिता का नाम पण्डित कृष्ण बिहारी वाजपेयी और माता का नाम कृष्णा वाजपेयी था। पिता पण्डित कृष्ण बिहारी वाजपेयी ग्वालियर में अध्यापक थे। कृष्णबिहारी वाजपेयी साथ ही साथ हिन्दी व ब्रज भाषा के सिद्धहस्त कवि भी थे। अटल बिहारी वाजपेयी मूल रूप से उत्तर प्रदेश राज्य के आगरा जिले के प्राचीन स्थान बटेश्वर के रहने वाले थे। इसलिए अटल बिहारी वाजपेयी का पूरे ब्रज सहित आगरा से खास लगाव है।

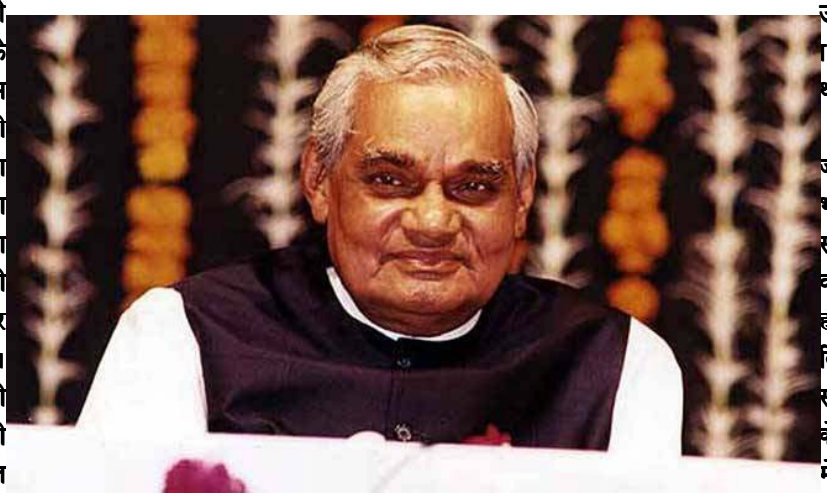

अटल बिहारी वाजपेयी जी की बी. ए. की शिक्षा ग्वालियर के वर्तमान में लक्ष्मीबाई कालेज के नाम से जाने वाले विक्टोरिया कालेज में हुई। ग्वालियर के विक्टोरिया कालेज से स्नातक करने के बाद अटल बिहारी वाजपेयी ने कानपुर के डी.ए.वी. महाविद्यालय से कला में स्नातकोत्तर उपाधि प्रथम श्रेणी में प्राप्त की। अटल बिहारी वाजपेयी एक प्रखर वक्ता और कवि हैं।

यह गुण उन्हें उनके पिता से वंशानुगत मिले। अटल बिहारी वाजपेयी जी को स्कूली समय से ही भाषण देने का शौक था और स्कूल में होने वाली वाद-विवाद, काव्यपाठ और भाषण जैसी प्रतियोगिताओं में वह हमेशा हिस्सा लेते थे। अटल बिहारी वाजपेयी छात्र जीवन से ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक बने और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखाओं में हिस्सा लेते रहे। अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने जीवन में पत्रकार के रूप में भी काम किया और लम्बे समय तक राष्ट्रधर्म, पांचजन्य और वीर अर्जुन आदि राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। अटल बिहारी वाजपेयी ने आजीवन अविवाहित रहने का निर्णय लिया और आज तक उसका निर्वहन कर रहे हैं। अटल बिहारी वाजपेयी भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्य थे और उन्होंने लंबे समय तक डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और पंडित दीनदयाल उपाध्याय जैसे प्रखर राष्ट्रवादी नेताओं के साथ काम किया।

वाजपेयी सन् १९६८ से १९७३ तक भारतीय जनसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष भी रहे। अटल बिहारी वाजपेयी सन् १९५७ के लोकसभा चुनावों में पहली बार उत्तर प्रदेश की बलरामपुर लोकसभा सीट से जनसंघ के प्रत्याशी के रूप में विजयी होकर लोकसभा में पहुँचे। अटल जी १९५७ से १९७७ तक लगातार जनसंघ की ओर से संसदीय दल के नेता रहे। अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने ओजस्वी भाषणों से देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू तक को प्रभावित किया। एक बार अटल बिहारी वाजपेयी के संसद में दिए ओजस्वी भाषण को सुनकर पंडित जवाहर लाल नेहरू ने उनको भविष्य का प्रधानमंत्री तक बता दिया था।

आगे चलकर पंडित जवाहर लाल नेहरू की भविष्यवाणी सच भी साबित हुई। अटल बिहारी वाजपेयी का व्यक्तित्व बहुत ही मिलनसार है। उनके विपक्ष के साथ भी हमेशा सम्बन्ध मधुर रहे। १९७१ के भारत पाकिस्तान युद्ध में विजयश्री के साथ बांग्लादेश को आजाद कराकर पाक के ९३ हजार सैनिकों को घुटनों के बल भारत की सेना के सामने आत्मसमर्पण करवाने वाली देश की प्रथम महिला प्रधानमंत्री स्वर्गीय इंदिरा गांधी जी को अटल बिहारी वाजपेयी ने संसद में दुर्गा की उपमा से सम्मानित किया था।

१९७५ में इंदिरा गाँधी द्वारा आपातकाल लगाने का अटल बिहारी वाजपेयी ने खुलकर विरोध किया था। आपातकाल की वजह से इंदिरा गाँधी को १९७७ के लोकसभा चुनावों में करारी हार झेलनी पड़ी और देश में पहली बार गैर कांग्रेसी सरकार जनता पार्टी के नेतृत्व में बनी, जिसके मुखिया स्वर्गीय मोरारजी देसाई थे। मोरारजी सरकार में अटल बिहारी वाजपेयी को विदेश मंत्री जैसा महत्वपूर्ण विभाग दिया गया।

अटल बिहारी वाजपेयी ने विदेश मंत्री रहते पूरे विश्व में भारत की अलग छवि बनायी। वह विदेश मंत्री के रूप में संयुक्त राष्ट्र में हिंदी में भाषण देने वाले देश के पहले वक्ता बने। अटल जी

१९७७ से १९७९ तक विदेश मंत्री रहे। १९८० में जनता पार्टी के टूट जाने के बाद अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने सहयोगी नेताओं के साथ भारतीय जनता पार्टी की स्थापना की। अटल बिहारी वाजपेयी भारतीय जनता पार्टी के पहले राष्ट्रीय अध्यक्ष बने।

१९९६ के लोकसभा चुनावों में भारतीय जनता पार्टी सबसे बड़े दल के रूप में उभरी। भाजपा द्वारा सर्वसम्मति से संसदीय दल का नेता चुने जाने के बाद अटलजी देश के प्रधानमंत्री बने। लेकिन अटल जी १३ दिन तक ही देश के प्रधानमंत्री रहे।

उन्होंने अपनी अल्पमत सरकार का त्यागपत्र राष्ट्रपति को सौंप दिया। १९९८ में भाजपा फिर दूसरी बार सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी और अटल बिहारी वाजपेयी दूसरी बार देश के प्रधानमंत्री बने, लेकिन १३ महीने बाद तमिलनाडु की तत्कालीन मुख्यमंत्री स्वर्गीय जयललिता के समर्थन वापस लेने से उनकी सरकार गिर गयी।

लेकिन इस बीच अटल बिहारी वाजपेयी ने प्रधानमंत्री रहते हुए दृढ़ इच्छाषक्ति का परिचय देते हुए पोखरण में पाँच भूमिगत परमाणु परीक्षण विस्फोट कर सम्पूर्ण विश्व को भारत की शक्ति का एहसास कराया। अमेरिका और यूरोपीय संघ समेत कई देशों ने भारत पर कई तरह के प्रतिबंध लगा दिए, लेकिन उसके बाद भी भारत अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में हर तरह की चुनौतियों से सफलतापूर्वक निबटने में सफल रहा।

अटल बिहारी वाजपेयी ने दूसरी बार प्रधानमंत्री रहते हुए पाकिस्तान से संबंधों में सुधार की पहल की और पाकिस्तान की तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ाते हुए १९ फरवरी १९९९ को सदा-ए-सरहद नाम से दिल्ली से लाहौर तक बस सेवा शुरू कराई। इस सेवा का उद्घाटन करते हुए अटल बिहारी वाजपेयी ने पाकिस्तान की यात्रा करके नवाज शरीफ से मुलाकात की और आपसी संबंधों में एक नयी शुरुआत की। लेकिन कुछ ही समय पश्चात् पाकिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ की शह पर पाकिस्तानी सेना व पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवादियों ने कारगिल क्षेत्र में घुसपैठ करके कई पहाड़ी चोटियों पर कब्जा कर लिया।

भारतीय सेना और वायुसेना ने पाकिस्तान द्वारा कब्जा की गयी जगहों पर हमला किया और पाकिस्तान को सीमा पार वापस जाने को मजबूर किया। एक बार फिर पाकिस्तान को मुँह की खानी पड़ी और भारत को विजयश्री मिली। कारगिल युद्ध की विजयश्री का पूरा श्रेय अटल बिहारी वाजपेयी को दिया गया।

कारगिल युद्ध में विजयश्री के बाद हुए १९९९ के लोकसभा चुनाव में भाजपा फिर अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी। सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरने के बाद भाजपा ने अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में १३ दलों से गठबंधन करके राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के रूप में सरकार बनायी और इस बार वाजपेयी की सरकार ने अपना पांच साल का कार्यकाल पूर्ण किया। इन पाँच वर्षों में राजग सरकार ने गरीबों, किसानों और युवाओं के लिए अनेक योजनाएं लागू कीं। अटल सरकार ने भारत के चारों कोनों को सड़क मार्ग से जोड़ने के लिए स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना की शुरुआत की और दिल्ली, कलकत्ता, चेन्नई व मुम्बई को राजमार्ग से जोड़ा गया।

२००४ में देश में लोकसभा चुनाव हुआ और भाजपा के नेतृत्व वाले राजग ने अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में शाइनिंग इंडिया का नारा देकर चुनाव लड़ा। इन चुनावों में किसी भी दल को बहुमत नहीं मिला। वामपंथी दलों के समर्थन से काँग्रेस ने मनमोहन सिंह के नेतृत्व में केंद्र की सरकार बनायी और भाजपा को विपक्ष में बैठना पड़ा। इसके बाद लगातार अस्वस्थ रहने के कारण अटल बिहारी वाजपेयी ने राजनीति से संन्यास ले लिया।

अटल जी को देश-विदेश में अब तक अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने २०१५ में भारत के सर्वोच्च सम्मान भारत रत्न से पूर्व प्रधानमंत्री वाजपेयी को उनके घर जाकर सम्मानित किया। भारतीय राजनीति के युगपुरुष, श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ, कोमल हृदय, संवेदनशील मनुष्य, वज्रबाहु राष्ट्रप्रहरी, भारत माता के सच्चे सपूत, अजातशत्रु पूर्व प्रधानमन्त्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी का २५ दिसम्बर २०१६ को ९२वां जन्मदिवस है। इस अवसर पर अंतर्मन से ईश्वर से सिर्फ यही प्रार्थना है कि ईश्वर अटल बिहारी वाजपेयी को स्वास्थ्य लाभ एवं चिर-आयु के आशीर्वाद से सदैव परिपूर्ण रखें।

अटल सरकार ने भारत के चारों कोनों को सड़क मार्ग से जोड़ने के लिए स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना की शुरुआत की और दिल्ली, कलकत्ता, चेन्नई व मुम्बई को राजमार्ग से जोड़ा गया। २००४ में देश में लोकसभा चुनाव हुआ और भाजपा के नेतृत्व वाले राजग ने अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में शाइनिंग इंडिया का नारा देकर चुनाव लड़ा। इन चुनावों में किसी भी दल को बहुमत नहीं मिला। वामपंथी दलों के समर्थन से काँग्रेस ने मनमोहन सिंह के नेतृत्व में केंद्र की सरकार बनायी और भाजपा को विपक्ष में बैठना पड़ा।

हिन्दुस्तानी से हिंग्लिश की ओर बढ़ते हुये बीता यह साल

२१वीं सदी के १६वें साल में हिन्दी अपने मिजाज के मुताबिक व्याकरण की जकड़बंदी से निकलकर उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी से होते हुए अंग्रेजीनुमा हिंग्लिश की ओर बढ़ती रही। बोलचाल अथवा संप्रेषण के स्वनियम पर आधारित हिन्दी में इस साल जहां एक ओर अन्य भाषाओं और

ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न इलाकों से आने वाले शब्दों को जगह मिली, वहीं दूसरी ओर फेसबुक-ट्विटर और कंप्यूटर के बढ़ते इस्तेमाल से 'हैष-टैग' और 'एट दि रेट अड्डफ' जैसे निशान भी हिन्दी में शामिल होते गये। पिछले साल हिन्दी अलग-अलग कारणों से समाचारों की सुर्खियों में रही। इसके औचित्य अनौचित्य पर विवाद-संवाद भी हुए, लेकिन दिन-प्रतिदिन हिन्दी के बढ़ते विराट जनक्षेत्र और व्यापक बाजार ने विदेशी कंपनियों को भी रोमन हिन्दी वाले विज्ञापन बनाने के लिए मजबूर कर दिया।

ओएलएक्स के 'नो मोर देखते हैं' और बिग बाजार की 'बिग बचत' वाली हिन्दी अपने विज्ञापन के मकसद में पूरी दिखी, वहीं 'अड्डसम रिलेशनशिप का लेबल हटा, दुनिया को तू है एवेलेबल बता' जैसे अंग्रेजी-हिन्दी मिश्रण वाले फिल्मी गानों को भी खूब बजाया-सुनाया और सराहा गया। अखबारों, चैनलों, रेडियो और विज्ञापन की अंग्रेजीनुमा हिन्दी के अलावा सरकार की 'मेक इन इंडिया' जैसी पहल से भी इस साल हिन्दी के शब्दकोष में डिजिटल, कैशलेस, आन-लाइन, एटीएम-पेटीएम जैसे नये शब्द शामिल हुए, वहीं संप्रेषण के नियम पर आधारित मीडिया और मनोरंजन क्षेत्र ने भी अंग्रेजीनुमा हिन्दी वाली हिंग्लिश को विस्तार दिया। समाजशास्त्री और 'पापुलर कल्चर' के हिमायती सुधीश पचौरी के अनुसार हिन्दी महज भाषा नहीं, बल्कि हिन्दी एक विराट व्यवहार है। यह दूसरी भाषा के शब्दों को अपने में कुछ ऐसे समाहित कर लेती है कि अलग से उनका फर्क करना मुश्किल हो जाता है। व्याकरण की रूढ़ियों को तोड़ना और संप्रेषण का स्वनियमन ही दरअसल हिन्दी भाषा की व्यापकता और बढ़ते बाजार का प्रमुख कारण है। हिन्दी बाजार की भाषा है और संप्रेषण वाली हिन्दी के बगैर यहां कारोबार करना संभव नहीं है।

बीते साल के अक्तूबर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़े संगठन 'शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास' ने मानव संसाधन विकास मंत्रालय को स्कूलों में प्राथमिकी से लेकर उच्च स्तर तक अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने और विदेशी किसी भारतीय भाषा के विकल्प के तौर पर नहीं रखे जाने का सुझाव दिया। इसके अलावा न्यास ने त्रिभाषा नीति की समीक्षा करने और नयी भाषा नीति बनाने की भी मांग की। सितंबर में हरियाणा के मुख्यमंत्री मनोहर लाल खट्टर ने 'स्टूडेंट लीगल लिटरेसी मिशन-२०१६' के वार्षिक समारोह में अदालतों को अपना फैसला हिन्दी अथवा क्षेत्रीय भाषा में सुनाने की सलाह दी। वहीं अप्रैल माह में हिन्दी की लोकप्रियता को दर्शाने वाली एक सकारात्मक खबर यह रही कि लंदन में मेयर पद के कंजरवेटिव पार्टी के उम्मीदवार जैक गोल्डस्मिथ के समर्थकों ने अपने चुनाव प्रचार के लिए हिन्दी गानों का इस्तेमाल किया। ब्रिटेन में मई २०१५ के आम चुनाव के दौरान प्रधानमंत्री डेविड कैमरन के चुनाव प्रचार के लिए हिन्दी भाषा में चुनाव गीत 'नीला है आसमान' बनाया गया था।

हालांकि हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा बनाने की कवायद दशकों पहले की गई थी, लेकिन अपने व्यापक प्रयोग और संप्रेषण की ताकत के बल पर अब हिन्दी खुद-ब-खुद ही देश भर में बोली और समझी जाने वाली भाषा बन रही है। गत

वर्ष सितंबर माह के दौरान मध्य प्रदेष की राजधानी भोपाल में १०वें विश्व हिन्दी सम्मेलन के समापन समारोह में फिल्म अभिनेता अमिताभ बच्चन को बुलाये जाने को लेकर सवाल उठाये गये थे, जिसके बाद विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता विकास स्वरूप को इस मामले में अपनी सफाई देनी पड़ी थी।

हिन्दी, तमिल और संस्कृत के विद्वान पी. जयरामन ने जयपुर लिटरेचर फेस्टिवल में हिन्दी में अन्य भाषा-बोलियों के शब्दों को उसी तौर पर स्वीकार करने और हिन्दी अनुवाद नहीं करने की अपील की थी। उन्होंने हिन्दी में भारतीय भाषाओं के महत्व और बेहद कम भागीदारी पर चिंता व्यक्त की थी। जयरामन ने कहा था कि हिन्दी को दुनिया भर में लोकप्रिय बनाने के लिए यह बेहद जरूरी है। शिक्षाविद् कृष्ण कुमार भी अनुवाद के स्थान पर बोलियों के शब्दों को हिन्दी में हू-ब-बू स्वीकारने की वकालत करते हैं। कुमार कहते हैं कि अब अनुवाद की अलमारी भर गयी है और बोलियों को हिन्दी में आने दो। विश्वविद्यालयों में हिन्दी विभाग स्थापित करने अथवा राजभाषा अधिनियम के तहत कार्यरत हिन्दी अधिकारी 'खिचड़ी' के स्थान पर जो 'चावल मिश्रित दाल' वाली हिन्दी बनाते रहते हैं, उससे हिन्दी का भला नहीं, बुरा ही हो रहा है।

सरकार ने भी हिन्दी को विश्व स्तर पर लोकप्रिय बनाने और उसे संयुक्त राष्ट्र की एक आधिकारिक भाषा के तौर पर स्वीकार कराने की दिशा में प्रयास जारी रहने की बात कही थी। लोकसभा में रमा देवी के पूरक प्रश्न के जवाब में विदेश राज्यमंत्री वी.के. सिंह ने कहा था कि सरकार हिन्दी को संयुक्त राश्ट्र की आधिकारिक भाषा के तौर पर स्वीकृत दिलाने के लिए प्रयास कर रही है और संयुक्त राष्ट्र के कार्यक्रमों को यूएन रेडियो वेबसाइट पर हिन्दी में प्रसारित किया जाना एक उपलब्धि है।

सुषमा स्वराज ने इस प्रश्न के लिखित जवाब में हिन्दी प्रोत्साहन के लिए किये गये प्रयासों के बारे में बताया था। उन्होंने कहा कि २००७ को न्यूयार्क में विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया गया था और इसका उद्घाटन सत्र संयुक्त राष्ट्र के मुख्यालय में हुआ था। सं.रा. के तत्कालीन महासचिव ने भी इसमें हिस्सा लिया था।

हालांकि सितंबर में योग को अंतरराष्ट्रीय मान्यता दिलाने के लिए १७७ देशों का समर्थन जुटा लिया गया था, लेकिन हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा की मान्यता पाने के लिए १२६ देशों का समर्थन नहीं मिला।

मनोरंजन एवं मीडिया के अलावा राजनीति और उद्योग अनजाने ही हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिए अपना योगदान देते रहते हैं। अगस्त में पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के सदन में दिए गए भाषण में अपने बांग्ला उच्चारण के साथ पश्चिम बंगाल को 'बेंगोल' (बंगाल) अथवा 'बोंग' (बंग) कहे जाने और इसके बाद इस नाम परिवर्तन को लेकर बहस छिड़ गयी थी और विपक्षी वामदलों, कांग्रेस और भाजपा ने वाकआउट कर दिया था।

बांग्ला उच्चारण के साथ बोले जाने के बावजूद मीडिया ने इसे सही करके बंगाल अथवा बंग के रूप में ही रिपोर्ट किया था। इसी प्रकार दिसंबर में पूर्व वित्त मंत्री पी चिदंबरम ने एक प्रेस कांफ्रेंस में 'खोदा पहाड़ और निकली चुइया' कहा था। जबकि अगले दिन समाचारपत्रों ने 'चुइया' को 'चुहिया' ही छापा था। वस्तुतः अनेक आंचलिक बोलियों और विभिन्न भाषाओं से मिलकर बनने वाली यह हिन्दी इस्तेमाल में हिन्दुस्तानी है और अब ज्ञान-विज्ञान के नये क्षेत्रों और अंग्रेजी के शब्दों के शामिल होने से हिंग्लिश की ओर बढ़ रही है।

हालांकि सितंबर में योग को अंतरराष्ट्रीय मान्यता दिलाने के लिए १७७ देशों का समर्थन जुटा लिया गया था, लेकिन हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा की मान्यता पाने के लिए १२६ देशों का समर्थन नहीं मिला। मनोरंजन एवं मीडिया के अलावा राजनीति और उद्योग अनजाने ही हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिए अपना योगदान देते रहते हैं। अगस्त में पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के सदन में दिए गए भाषण में अपने बांग्ला उच्चारण के साथ पश्चिम बंगाल को 'बेंगोल' (बंगाल) अथवा 'बोंग' (बंग) कहे जाने और इसके बाद इस नाम परिवर्तन को लेकर बहस छिड़ गयी थी और विपक्षी वामदलों, कांग्रेस और भाजपा ने वाकआउट कर दिया था। बांग्ला उच्चारण के साथ बोले जाने के बावजूद मीडिया ने इसे सही करके बंगाल अथवा बंग के रूप में ही रिपोर्ट किया था। इसी प्रकार दिसंबर में पूर्व वित्त मंत्री पी चिदंबरम ने एक प्रेस कांफ्रेंस में 'खोदा पहाड़ और निकली चुइया' कहा था। जबकि अगले दिन समाचारपत्रों ने 'चुइया' को 'चुहिया' ही छापा था। वस्तुततः अनेक आंचलिक बोलियों और विभिन्न भाषाओं से मिलकर बनने वाली यह हिन्दी इस्तेमाल में हिन्दुस्तानी है और अब ज्ञान-विज्ञान के नये क्षेत्रों और अंग्रेजी के शब्दों के शामिल होने से हिंग्लिश की ओर बढ़ रही है।